

जैन धर्म में अक्षय तृतीया का महत्व

- डॉ. आशीष जैन आचार्य शाहगढ़ सागर

(राष्ट्रपति पुरस्कार प्राप्त)

महामंत्री, प्राकृत भाषा विकास फाउण्डेशन

अक्षय तृतीया जैन धर्म का एक अत्यंत महत्वपूर्ण पर्व है, जो केवल धार्मिक अनुष्ठान भर नहीं, बल्कि जैन तप, त्याग, आहार-विधि, दान-परंपरा और आत्मशुद्धि के गहन सिद्धांतों का प्रतीक है। जैन परंपरा में इसका संबंध प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के दीक्षा-प्रसंग, तेरह माह की कठिन तपस्या तथा हस्तिनापुर में श्रेयांस कुमार द्वारा किए गए प्रथम आहार-दान से जोड़ा जाता है। इस कारण यह तिथि जैन साधना-पद्धति और धार्मिक जीवन-दृष्टि में विशिष्ट स्थान रखती है।

प्रस्तावना

जैन धर्म में पर्वों का महत्व केवल सामाजिक उत्सव तक सीमित नहीं है, बल्कि वे साधना, आचार और मोक्षमार्ग से गहरे जुड़े होते हैं। अक्षय तृतीया ऐसा ही एक पर्व है, जो “अक्षय” अर्थात् अविनाशी पुण्य, आत्मिक शुद्धि और सत्कर्म की स्थायित्वपूर्ण फल-प्राप्ति का प्रतीक है। यह दिवस जैन इतिहास में भगवान ऋषभदेव के जीवन-प्रसंग से जुड़ा होने के कारण विशेष रूप से पूजनीय है।

ऋषभदेव और तपस्या-परंपरा

जैन आगम तथा पुराण परंपरा के अनुसार भगवान ऋषभदेव ने राज्य, ऐश्वर्य और सांसारिक भोगों का त्याग कर दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा के पश्चात वे पूर्ण वैराग्य के साथ तप और ध्यान में लीन हो गए। उनकी तपश्चर्या का चरम रूप तेरह माह का निराहार जीवन था। यह प्रसंग जैन धर्म में तप के आदर्श स्वरूप को प्रस्तुत करता है।

जैन दर्शन में तप केवल शरीर को कष्ट देने की क्रिया नहीं है, बल्कि कर्म-निर्जरा का साधन है। तत्त्वार्थ सूत्र का “तपसा निर्जरा च” सिद्धांत इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि तप के द्वारा संचित कर्मों का क्षय होता है और आत्मा शुद्ध होती है। इसलिए ऋषभदेव की तपस्या को जैन साधना का आदर्श माना गया है।

प्रथम आहार और आहार-विधि

अक्षय तृतीया का सबसे महत्वपूर्ण प्रसंग राजा श्रेयांस कुमार से संबंधित है। जैन परंपरा के अनुसार उन्हें जातिस्मरण ज्ञान हुआ, जिससे वे समझ गए कि साधु को आहार किस विधि से देना चाहिए। उन्होंने भगवान ऋषभदेव को इक्षु-रस अर्पित किया, जिसे भगवान ने स्वीकार किया और अपना प्रथम आहार ग्रहण किया।

यह घटना जैन आहार-विधि की स्थापना का आधार मानी जाती है। जैन धर्म में आहार को केवल शारीरिक आवश्यकता नहीं, बल्कि संयम, जीवदया और शुद्ध भावना से जुड़ा हुआ धार्मिक कार्य माना गया है। इस प्रसंग से यह शिक्षा मिलती है कि दान का मूल्य वस्तु में नहीं, बल्कि पात्र, विधि और भावना में निहित होता है।

वर्षीतप और साधना का स्वरूप

अक्षय तृतीया का संबंध वर्षीतप से भी स्थापित किया जाता है। वर्षीतप जैन साधकों द्वारा की जाने वाली एक कठोर तपस्या है, जिसमें एक वर्ष तक एक दिन उपवास और दूसरे दिन मर्यादित आहार लिया जाता है। यह साधना भगवान ऋषभदेव की तेरह माह की तपस्या की स्मृति में की जाती है।

वर्षीतप का पारणा प्रायः अक्षय तृतीया के दिन होता है, जो इस पर्व को साधना की पूर्णता और आत्मानुशासन की विजय का प्रतीक बनाता है। इस प्रकार अक्षय तृतीया केवल ऐतिहासिक स्मरण नहीं, बल्कि जीवंत साधना-परंपरा का हिस्सा है।

दान, करुणा और सम्यक भाव

जैन धर्म में दान का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। किंतु जैन दृष्टि में दान तभी श्रेष्ठ है जब वह श्रद्धा, ज्ञान, करुणा और विवेक से युक्त हो। श्रेयांस कुमार का दान इसी कारण आदर्श माना जाता है। उन्होंने केवल इक्षु-रस प्रदान नहीं किया, बल्कि सम्यक विधि से योग्य आहार अर्पित किया।

यह प्रसंग यह भी बताता है कि जैन धर्म में बाह्य क्रिया से अधिक आंतरिक भाव का महत्व है। सम्यक भाव से किया गया दान ही आत्मकल्याण का साधन बनता है। इसलिए अक्षय तृतीया को दान-पुण्य के लिए विशेष शुभ दिन माना जाता है।

दार्शनिक दृष्टि

“अक्षय” शब्द का अर्थ है जिसका क्षय न हो। जैन दर्शन के अनुसार जो पुण्य, तप, संयम और स्वाध्याय आत्मशुद्धि के लिए किए जाते हैं, उनका फल स्थायी और आत्मोन्नति का कारण बनता है। इस दृष्टि से अक्षय तृतीया शरीर-सुख या लौकिक लाभ का नहीं, बल्कि आत्मिक उन्नति का पर्व है।

यह पर्व जैन साधक को यह स्मरण कराता है कि आत्मा का वास्तविक स्वरूप अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन और अनंत सुख से युक्त है, किंतु कर्मों के कारण वह आवृत हो जाता है। तप, संयम और त्याग के माध्यम से इस आवरण को हटाया जा सकता है।

सामाजिक और नैतिक महत्व

अक्षय तृतीया का संदेश केवल धार्मिक क्षेत्र तक सीमित नहीं है। यह पर्व सादगी, संतुलन, करुणा और आत्मनियंत्रण जैसे नैतिक मूल्यों को समाज में स्थापित करता है। आधुनिक उपभोक्तावादी युग में यह पर्व मानव को भोग से ऊपर उठकर संयम और आत्मसंयम की ओर प्रेरित करता है।

यह पर्व यह भी सिखाता है कि जीवन का उद्देश्य केवल बाहरी उपलब्धियों का संग्रह नहीं, बल्कि आंतरिक शुद्धि और आत्मविकास है। इस अर्थ में अक्षय तृतीया जैन धर्म की जीवनदृष्टि का सजीव प्रतीक है।

निष्कर्ष

अक्षय तृतीया जैन धर्म में तप, त्याग, दान, आहार-विधि और आत्मशुद्धि का अत्यंत महत्वपूर्ण पर्व है। भगवान ऋषभदेव की दीक्षा, उनकी तेरह माह की तपस्या और श्रेयांस कुमार द्वारा प्रथम आहार-दान की घटना इसे ऐतिहासिक, धार्मिक और दार्शनिक रूप से विशिष्ट बनाती है। यह पर्व जैन साधना की उस परंपरा का स्मरण कराता है, जिसमें आत्मकल्याण के लिए संयम, करुणा और शुद्ध आचरण को सर्वोच्च स्थान दिया गया है।

अतः कहा जा सकता है कि अक्षय तृतीया जैन धर्म में केवल एक पर्व नहीं, बल्कि एक जीवन-दर्शन है, जो प्रत्येक युग में साधक को आत्मशुद्धि, त्याग और मोक्षमार्ग की प्रेरणा देता है।